पंचम अध्याय

विवेच्य उपन्यासों में चित्रित आर्थिक तथा अन्य समस्याएँ

''विवेच्य उपन्यासों में चित्रित आर्थिक तथा अन्य समस्याएँ''

प्रस्तावना -

सन् 1857 के पश्चात् अंग्रेजों की शासन सत्ता भारत में अच्छी तरह से चल रही थी। इसी बीच मध्यकालीन सामंती व्यवस्था और संस्कृति का लोप होने लगा। अंग्रेज हमारे देश में न आते तो भी यह आर्थिक क्रांति हमारे देश में अवश्य होती। भारत में व्यवसाय और उद्योगधंधे काफी फैले हुए थे, किंतु अंग्रेजों ने उन्हें नष्ट करके हमारी सामाजिक और आर्थिक उन्नति में महान आघात उपस्थित कर दिया। अंग्रेजों की कूटनीति थी कि उन्हें भारत का आर्थिक शोषण करना था। इसकी पूर्ति के लिए एक ओर तो उन्होंने देशी उद्योगधंधों का समूल नाश किया और दूसरी ओर विदेशी पूँजी से भारत में नए उद्योग धंधें स्थापित किए गए। शिक्षा का प्रचार भी विशाल साम्राज्य को चलाने के लिए सस्ते क्लर्कों के उत्पादन के निमित्त था।

उनकी स्वार्थ-सिद्धि का यह चक्र उलट कर उनका राज्य नष्ट हो गया। महँगाई, अकाल, टैक्स और दरिद्रता भारतेंदु युग की प्रमुख समस्याएँ थी, जिनकी प्रतिध्वनि तत्कालीन साहित्य में स्पष्ट है। कृषक वर्ग पर मालगुजारी का बोजा लादकर तथा जमींदारों के अत्याचारों को प्रहाय देकर अंग्रेजों ने किसानों को अत्यधिक दीन-हीन बना दिया। प्रथम महायुद्ध के पश्चात् काँग्रेस ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के द्वारा अंग्रेजों की औद्योगिक नीति तथा आर्थिक शोषण का विरोध किया। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् भारत को विश्वव्यापी महँगाई और बेरोजगारी का शिकार होना पड़ा।

आजादी के बाद भारतीय समाज जीवन के आर्थिक परिवेश में काफी परिवर्तन आया। अर्थ जीवन का मूल्य बन गया। पैसा जिसके पास है उसको दुनिया सलाम करती है, उसी के आधार पर ही व्यक्ति का मूल्यांकन किया जाने लगा। कृषिप्रधान देश भारत का अब मशीनीकरण होता जा रहा है। सरल जीवन आर्थिक दबाव के कारण जटिल बनता जा रहा है। ग्राम्य जन गाँवों को छोड़कर अपनी आजीविका के लिए कस्बों, नगर तथा महानगरों में धँसते जा रहे हैं। वे अंधी गलियों, गंदी बस्तियों और फुटपाथों की यातना को भोग रहे हैं। आज़ादी के बाद

समाज में आर्थिक योजनाएँ बना दी, समाजवादी समाज व्यवस्था का संकल्प किया। लेकिन सच्चाई यह है कि आज़ादी के बाद गरीब लगातार गरीब होता गया और अमीर अधिक अमीर होता गया।

भारत कृषिप्रधान देश है। आज़ादी के बाद कृषि में सुधार करने के प्रयास किए जाने लगे। परंतु यह प्रयास अत्यंत कम मात्रा में किए गए। सिंचाई की सुविधा तो आज भी सभी किसानों को उपलब्ध नहीं हुई है। कृषि उद्योग के लिए सिंचाई, यातायात, वैज्ञानिक तकनिक से बनाए हुए सभी साधन आदि से भारतीय किसान आज भी वंचित रहा है। फलतः किसानों की स्थिति भी दयनीय हुई है। देश में आर्थिक समस्या अधिक जटिल हुई।

डॉ. बालकृष्ण गुप्त के अनुसार देश का विभाजित होना इसका और एक प्रमुख कारण है। वे लिखते हैं- "देश के विभाजन से भारत की आर्थिक हानि ही नहीं हुई अपितु देश की आर्थिक समस्या और अधिक जटिल हो गई।"[1]

सन् 1962 में चीन से तथा 1965 और 1971 में पाकिस्तान से हुए युद्ध ने देश की आर्थिक दशा पर प्रतिकुल प्रभाव डाला। व्यक्ति और समाज विकास की जितनी भी योजनाएँ बनाई उनके लाभ से वे वंचित रहे।

किंतु ऐसा भी नहीं कि आज़ादी भारत की कोई उपलब्धि ही नहीं है। भूमिविकास के लिए आधुनिक साधन, कारखानों का निर्माण, रासायनिक खाद, रेल्वे इंजन, हवाई जहाज, पानी के जहाज, टेलिफोन, रेडियो, टेलीविजन, बिजली, तेल, शिक्षा का प्रसार आज़ाद भारत की ही उपलब्धियाँ हैं। परंतु बढ़ती हुई जनसंख्या, भ्रष्ट शासन व्यवस्था, बेकारी पद लोलुपता, अनैतिकता, अपराध, महानगरों का विस्तार आदि के कारण स्वातंत्र्योत्तर भारतीय आर्थिक परिस्थिति में आशातीत वृद्धि नहीं हुई। समाज सेवा नेताओं के लिए जीविका का साधन बन गया। नेताओं ने समाज सेवा के बहाने अपनी आर्थिक स्थिति सुधार ली।

फलतः यह हुआ कि अर्थहीन लोग अधिक हीन हो गए और अर्थ संपन्न लोग और अधिक संपन्न हो गए। देश की बहुसंख्य जनता का जीवन अर्थ के अभाव में अर्थहीन हो गया। आर्थिक विषमता की जड़ें और अधिक मजबूत हो गई। राही मासूम रजा के उपन्यासों में इसका

---

1. डॉ. बाळकृष्ण गुप्त - हिंदी उपन्यास सामाजिक संदर्भ, पृ. 431

चित्रण यथार्थ रूप में मिलता है। उन्होंने अर्थ संबंधित तथा जिन अन्य समस्याओं का चित्रण किया है वे इस प्रकार हैं-

5.1 बेरोजगारी की समस्या -

बेरोजगारी की समस्या अनेक गंभीर समस्याओं को जन्म देती है। यह समस्या आर्थिक जीवन को प्रभावित करती है। इस समस्या से गरीबी, ऋणग्रस्तत और अपराध जैसी समस्याएँ जन्म लेती हैं।

बेरोजगारी की समस्या आधुनिक युग की समस्या है। इस समस्या का विकास आर्थिक-सामाजिक संरचनाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन और विश्व युद्धों के परिणामस्वरूप हुआ है। आर्थिक संरचना के क्रांतिकारी परिवर्तनों में औद्योगिकरण और नागरीकरण नाम की नई धारणाओं का उदय हुआ। साथ में ग्रामीण उद्योगों और कृषि कार्यों का जन्म भी हुआ। इससे कृषक बेकारी का विकास हुआ और इसके साथ "लघु कुटीर उद्योगों के पतन ने इस ग्रामीण बेकारी की समस्या को जटिल बना दिया। इस कारण ग्रामों को छोड़कर लोग नगरों की ओर आकर्षित हुए। इस प्रकार नगरों में बेकारी की समस्या का सीधा विकास हुआ।"[1]

बेरोजगारी के प्रमुख कारण नागरीकरण, दोषपूर्ण उद्योगों की स्थापना, अपूर्ण औद्योगीक विकास, प्रशिक्षण का अभाव, सीमित व्यापारिक सुविधाएँ, दोषपूर्ण लायसेंस कार्य प्रणाली, ग्रामों का पतन आदि हैं।

विशेषकर 'प्लानिंग कमीशन' के अनुसार जनसंख्या में शीघ्र वृद्धि, ग्रामीण उद्योगों का पतन, रोजगार की ग्रामीण समाज में अनुपयुक्त विकास, कृषि में पुराने यंत्रों का प्रयोग, कृषि का वर्षा पर आश्रित होना आदि ग्रामीण बेरोजगारी के प्रमुख कारण हैं। आधुनिक हिंदी साहित्य में बेरोजगारी की समस्या का चित्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में बेरोजगारी का अत्यंत मार्मिकता से चित्रण किया है। राही जी गाजीपुर के पुराने किले का वर्णन करते हुए बताते हैं कि, "यदि आज भी कोई व्यक्ति उस किले की पुरानी दीवार पर बैठकर अपनी आँखें मूँद ले तो वह कल्पना के नेत्रों से भारत की पुरानी ऐतिहासिक घटनाओं का दर्शन कर सकता है। लेकिन इन दीवारों पर कोई बैठता ही

---

1. द्वारिका प्रसाद गोयल - भारतीय सामाजिक समस्याएँ, पृ. 487

नहीं। क्योंकि जब इन पर बैठने की उम्र जाती है तो गजभर की छानियोंवाले बेरोजगारी के कोल्हू में जोत दिए जाते हैं कि वे अपने सपनों का तेल निकालें और उस जहर को पीकर चुपचाप मर जाए।''[1]

बेरोजगारी की वजह से गाजीपुर के अनेक नौजवान नौकरी की तलाश में कलकत्ता चले जाते हैं। वे अपने जीवन का अधिकांश भाग नौकरी खोजने में ही बिताते हैं, इसकारण उनकी पत्नीयों का अधिकांश जीवन उनके विरह में बिताना पड़ता है। उनकी इस करुणामय दशा का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं- ''कलकत्ता किसी शहर का नाम नहीं है। गाजीपुर के बेटे बेटियों के लिए यह भी विरह का एक नाम है। यह शब्द विरद की एक पूरी कहानी है, जिसमें न मालूम कितनी आँखों का काजल बहकर सूख चुका है। हर साल हजारों हजार परदेश जानेवाले मेघदूत हजारों हजार संदेश भेजते हैं।''[2]

इस प्रकार राही जी बताते हैं कि बेरोजगारी की समस्या का इतना गहरा असर पड़ता है कि आदमी का जीवन बिखर जाता है।

राही जी ने इस समस्या का चित्रण एक और उपन्यास 'कटरा बी आर्जू' में किया है। बेरोजगारी की समस्या का समाधान की आशा सरकार से करना बेकार है। यह समस्या तब तक हल नहीं हो सकती कि जबतक समाज का प्रत्येक व्यक्ति इसके लिए परिश्रम नहीं करता। भारतीय समाज में आज भी ऐसे व्यक्ति हैं, जो किसी भी प्रकार का काम करने की इच्छा ही नहीं करते। ऐसे ही एक पात्र का चित्रण राही जी ने इस उपन्यास में किया है।

राही जी अल्ला रक्खे का वर्णन करते हुए कहते हैं- ''अधेड़ उम्र का आदमी था। पहले बाप की कमाई खाता था। फिर बड़े भाई की कमाई खाने लगा। फिर अपने बेटे की कमाई खाने लगा। बाप मर गया। बड़ा भाई पाकिस्तान चला गया। बेटा हिंदू-मुस्लिम दंगों में मारा गया। अल्ला रक्खे को कोई काम आता ही नहीं था। वह कोई काम जानना भी नहीं चाहता था और अब काम सीखने की उम्र भी नहीं थी और कटरेवाले उस निकम्मे को खिलाने पर तैयार भी नहीं थे।''[3]

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 9-10
2. वही, पृ. 10
3. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 105

प्रस्तुत उदाहरण से लेखक राही जी यही स्पष्ट करना चाहते हैं कि जब तक प्रत्येक भारतवासी आलस्य को त्यागकर कठोर परिश्रम करने के लिए तैयार नहीं होता तब तक बेरोजगारी की समस्या का हल नहीं हो सकता।

5.2 दरिद्रता की समस्या -

दरिद्रता की समस्या भारत के ग्रामीण समुदाय की सबसे बड़ी समस्या है। इस समस्या का भयानक रूप प्रत्येक गाँव में दिखाई देता है। हिंदी साहित्य में उपन्यासों एवं कहानियों में इसका चित्रण हुआ है। उपन्यास सम्राट प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं में दरिद्र किसानों की दयनीय दशा का स्वाभाविक चित्रण किया है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में संपन्न जमींदार परिवारों में पाई जानेवाली दरिद्रता का चित्रण किया है। उन्होंने यह दिखलाया है कि दरिद्रता एक ऐसा सर्वव्यापी रोग है जिसमें सब ग्रस्त हैं।

यह दरिद्र परिवार तुरंत धनवान बन जाने के अनेक साधन खोजते हैं। उसीकारण वे जुआ खेलते हैं। आधुनिक युग में इसी मनोवृत्ति का लाभ उठाकर अनेक संस्थाओं का जन्म हुआ जिनके माध्यम से लोग तुरंत अमीर बनने के प्रयत्न करते हैं।

उर्दू की मासिक पत्रिका 'शमा' इसी प्रकार प्रत्येक महीने में एक 'मुअम्मा' प्रकाशित करती है, जिसको सुलझाने पर बड़े-बड़े पुरस्कारों की घोषणा की जाती है। दरिद्र परिवार किस प्रकार अपनी समस्त समस्याओं को सूलझाने के लिए इसी 'शमा मुअम्मा' पर अपनी आशाएँ लगाए बैठे रहते हैं उनका अत्यंत मार्मिक चित्रण राहीी ने 'आधा गाँव' में किया है।

'अब्बू, मियाँ, गंगौली के एक गरीब जमींदार शमा मुआम्मा हल करके तुरंत धनवान बन जाना चाहते हैं। अतः वे हर रात सईदा की माँ के बुदबुदाने की परवाह न करते हुए 'शमा मुअम्मा' हल करने लगते और दुअँ माँगने लगते कि बस एक बार मुअम्मे को इनाम मिल जाए, हर बार होता यह कि जब इनाम चार गलतियों तक बाँटा जाता तो उनके हल में पाँच गलतियाँ निकल आती। ....फिर अगले मुअम्मे की तैयारी शुरू हो जाती..... पर मुअम्मे के इंतजार में जिंदगी की जरूरतें तो रूक नहीं जाती.... जरूरते महँगी होती जा रही थी।''[1] इस प्रकार लेखक

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 342

खूद स्पष्ट करना चाहते हैं कि दरिद्रता एक ऐसी समस्या है जिसका समाधान केवल आशाभरी कल्पना के माध्यम से संभव नहीं है।

दरिद्रता की समस्या राही जी के 'दिल एक सादा कागज' उपन्यास में भी पाई जाती है। इस उपन्यास में लेखक ने मध्य वर्ग में पाई जानेवाली दरिद्रता का वास्तविक चित्रण किया है। भारतीय गाँवों में दरिद्रता ज्यादा दिखाई देती है। लोग इस दरिद्रता के कारण केवल आत्महत्या ही नहीं करते तो कभी-कभी माता-पिता ही अबोध संतान की भयंकर दरिद्रता के कारण भूख आदि के कष्ट से तड़पती हुई अवस्था को देखकर उनकी दयनीय दशा को सह नहीं सकते हैं। उन्हें उससे मुक्ति दिलाने के लिए भावनावश होकर उनकी हत्या कर देते हैं। ऐसा ही एक प्रसंग राही जी ने 'दिल एक सादा कागज' में प्रस्तुत किया है।

मुनीश अपने बनाए हुए चित्रों को लाजवन्नी को दिखाते हुए एक चित्र की ओर संकेत करता है और कहता है कि ''इस औरत को देखिए। यह एक माँ है। तीन-चार बरस पहले इस पर अपने तीन छोटे-छोटे बच्चों के मलक का केस चला था। इसने भरी अदालत में कहा था- हाँ, मैंने अपने बच्चों को मार डाला क्योंकि मुझसे उनका भूखों मरना नहीं देखा जा रहा था।''[1]

राही जी स्वयं एक प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं और वे फिल्मी जगत में कहानियाँ लिखकर जीविकोपार्जन कर रहे हैं। अतः इस वर्ग की गरीबी का उन्होंने अत्यंत मार्मिक वर्णन किया है।

जो साहित्यकार केवल अपनी रचनाओं को बेचकर अपना जीवन बिताना चाहता है, उसकी दशा अत्यंत दयनीय होती है। वह हर वक्त उच्चकोटि के साहित्य की रचना नहीं कर सकता क्योंकि उसका मस्तिष्क जीवन की आर्थिक समस्याओं से जूझने में ही व्यस्त रहकर उसकी योग्यता को कुत्सित करता है।

'दिल एक सादा कागज' का नायक रफ्फन भी साहित्य की रचना द्वारा अपना जीविकोपार्जन करना चाहता है। परंतु ''बहुत दिनों तक वह उपन्यासकार न बन सका, हिम्मत ही न पड़ी। पर जब जन्नत ने नोटिस दिया कि अब घर नहीं चल सकता तो उसे उपन्यासकार बनना ही पड़ा। जन्नत सूरत पर सवार रहती कि जल्दी खत्म करो उपन्यास। उसे उपन्यास के खत्म

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 80

होने या न होने से कोई दिलचस्पी न थी। वह तो यह चाहती थी कि उपन्यास खत्म हो कि घर में पैसे आए, बाकी बिलों, तकाजें के खातों से जान छूटे। उपन्यास बिस्तर की चादर, गेहुँ की बोरी, नमक का पैकेट, लौंग की पुड़िया और चाय का डिब्बा बन जाए।''[1]

जन्नत जानती थी कि उत्तम साहित्य की रचना नहीं की जा सकती। परंतु वह आर्थिक स्थितियों के कारण मजबूर थी। उसकी मजबूरी का वर्णन करते हुए लेखक कहते हैं कि ''घर का किराया देना एक अच्छी नज्म लिखने से ज्यादा बड़ा काम है। बिजली का बिल भरना एक अच्छी कहानी लिखने से कहीं ज्यादा जरूरी है। पाठकों के कहानी लिखने से कहीं ज्यादा जरूरी है। पाठकों के तारीफ भरे खत गर्म चाय की एक प्याली नहीं बन सकते। एक रुपए का नोट नहीं बन सकते। ....कुछ नहीं बन सकते। अच्छी कविताएँ और महान कहानियाँ लिखने का शौक चर्राए तो शादी-ब्याह के चक्कर में न पड़ो। चाँद में रहनेवाली किसी लड़की से प्यार करो और किसी दफ्तर में कलर्की करो और जब तक जिया जाए जियो और साहित्य की सेवा करो और आटो ग्राफ बाँटो और फिर एक दिन चुपचाप मरकर चंदे से दफन हो जाओ या जल जाओ।''[2]

फिल्मों के लिए कहानियाँ लिखनेवाले अमीर नहीं होते। जब तक उनकी कोई कहानी निर्माताओं को पसंद नहीं आती तब तक उन्हें दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं। इस प्रकार की स्थिति का उदाहरण देकर, राही जी रफ्फन के चरित्र-चित्रण द्वारा प्रस्तुत करते हैं।

''नारायण गंज को जाते समय रेलगाड़ी में बैठे हुए रफ्फन ने एक सिगरेट सुलगा ली। मजा नहीं आया। जी चाहा कि जलती हुई सिगरेट का बाहर फेंक दूँ। सिगरेट को फेंकने के लिए उसका हाथ उठ भी गया था कि खयाल आया कि पूरी की पूरी सिगरेट को यूँ फेंक देना बड़ी बेवकूफी की बात है। उसका हाथ रूक गया -

एक सिगरेट = एक आना।

एक आना = एक निवाला खाना।

एक निवाला खाना = एक चुल्लू पसीना।

एक चुल्लू पसीना = एक कतरा खून- अपना खून।

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 79
2. वही, पृ. 80

सिगरेट की आग झाड़कर उसने सिगरेट को उसकी डिबीया में वापस रख दिया।''[1]

इस प्रकार राही जी ने भारतीय मध्यम वर्ग में सर्वत्र फैली दरिद्रता का वास्तविक वर्णन किया है। इससे राही जी यह बतलाना चाहते हैं कि दरिद्रता की समस्या केवल अनपढ़ पिछड़े हुए ग्रामीणों तक सीमित नहीं है, तो उच्च शिक्षा प्राप्त किए हुए शहरों में स्थित मध्यवर्गीय अनेक परिवार भी इसमें फँसे हुए हैं।

राही जी ने 'कटरा बी आर्जू' उपन्यास में भी प्रस्तुत समस्या का हृदय ग्राही चित्रण किया है। दरिद्रता अपनी एक समस्या नहीं है, तो वह अनेक समस्याओं की जन्मदात्री भी है।

अध्ययन की ओर आकृष्ट हुई महिला का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं कि ''शहनाज में जो डबल खराबी थी वह यह थी कि उसे पढ़ने का शौक था। और कुछ न मिलता तो जोखन के यहाँ से आनेवाली पुड़ियों के कागज सँभालती फिरती जो आमतौर पर पुराने अखबार के टुकड़े होते। कभी-कभी स्कूल की कापियों का कागज निकालना। रूलदार कागज पर लिखे हुए खत भी निकल आते कभी कभार वह उन्हीं को पढ़ती रहती और सुक्कन की कोसनों की तरफ से उन क्षणों में उसके कान बंद हो जाते।''[2]

भारत में दरिद्रता इतनी बढ़ चुकी है कि माता-पिता अपनी संतान की दशा देखकर उनके मरने की प्रार्थना करते हैं। शनराज की माता सकीना के भी यही उद्‌गार लेखक प्रस्तुत करते हैं। राही जी कहते हैं कि ''सकीना बी उर्फ सुक्कन उठते-बैठते अल्लाह मियाँ को अपनी तरफ से समझाती रहती थी कि शहनाज मर गई होती तो अच्छा होता। अब भी मर जाए तो बुरा नहीं। पर अल्लाह मियाँ ने तो जैसे अपने कान में तेल डाल रखा था। सुक्कन का यही सवाल था और इसीलिए न सिर्फ यह कि शहनाज मरी नहीं बल्कि बीमार पड़-पड़ के इलाज के पैसे ऊपर से खर्च करवाने लगी।''[3]

भारत में दरिद्रता इतनी बढ़ी हुई है कि दिन रात काम करके भी दो वक्त का भरपेट खाना नहीं मिलता। राही जी इसी स्थिति का उदाहरण देकर शम्सू मियाँ की दशा का वर्णन करते

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 106
2. राही मासूम रजा - कटरा की आर्जू, पृ. 22
3. वही, पृ. 22

हैं। राही जी कहते हैं कि जब मोटर मॅकेनिक गैरेज में खाने की घंटी बजी तब "कारों, ट्रकों और बसों के नीचे मैकेनिक निकलने लगे जैंसे पहले पानी के बाद जमीन से कीड़े-मकोड़े निकलने लगते हैं। ग्रीस भरे सूत के लच्छों से हाथ-मुँह पोंछते, सब अपने-अपने डिब्बों की तरफ गए। हर डिब्बे में उस परिवार की भूख आई थी। देश ने अपना डिब्बा निकाला।

'आपका खाना कहाँ है ?' देश ने कहा।

'हमारा रोजा है।' शंम्सू मियाँ ने कहा।

'रोजा ?'

'अब हम हर महीने की पच्चीस से तीस तक रोजा रखने लगे हैं।'

यह लीजिए देश ने कहा, "आजे रोजा रखना था। 'हम तो आपके वास्ते आलू का भुरता, बेसन की रोटी और मिरचे का अचार....' शम्सू मियाँ के मुँह में पानी आ गया। बोले, 'अरे तो कोई वाजिब रोजा थोड़े है।' "[1] दोनों ने खाना शुरू कर दिया।

राही जी ने अपने उपन्यास 'सीन-75' में भी मध्यवर्गीय क्लर्कों की दयनीय अवस्था का चित्रण किया है।

राही जी अली मुल्लाह ही और उनके साथियों का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि "अली मुल्लाह ही कामवाला था। बाकी तीनों दोस्तों को महीने के आखिर में फाइनेंस भी किया करता था। तीनों दोस्तों के महीने का आखिर अलग-अलग शुरू हुआ करता था। हरिश को महीने की 15 को तनख्वाह मिलती थी तो उसके महीने का आखिर पहली दूसरी से लगता था। कभी-कभी उसके महिने का आखिर कई महीनों तक फैल जाता था, क्योंकि छोटी और मझली फिल्म कंपनियों में तनख्वाह का कोई भरोसा नहीं है। वी. डी. के महीने में तनख्वाह लगभग साल भर चलता था। अली अमजद के महीने का आखिर आमतौर से महीने के आखिर में ही होता था।"[2]

इस प्रकार भारत में फैली इस भयंकर समस्या का चित्रण राही ने अपने उपन्यासों में अधिक मात्रा में किया है। उनके लगभग आधे से ज्यादा उपन्यासों में यह समस्या पाई जाती है। विशेषकर मध्यवर्गीय क्लर्कों की दशा ही अत्यंत शोचनीय है, क्योंकि उनका वेतन इतना कम होता

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 24
2. राही मासूम रजा - सीन-75, पृ. 22

है कि अति आवश्यक खर्चों के पश्चात् समाज में अपनी आदरपूर्वक स्थिति बनाए रखना उनके लिए अत्यंत कठिन हो जाता है। इन सबका चित्रण राही ने अत्यंत मार्मिकता से किया है।

5.3 ऋणग्रस्तता की समस्या -

ऋणग्रस्तता की समस्या ग्रामीण भारत की सबसे प्रधान आर्थिक समस्या है। इस समस्या के समाधान पर ही हमारा सामाजिक सुख सुरक्षा और कल्याण निर्भर है। किसानों में ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि, खेतों का टुकड़ों में विभाजन, सहायक उद्योगों का अभाव, शारीरिक एवं मानसिक अस्वस्थता, कवि की प्रकृति पर निर्भरता, खेती की परंपरागत विधि, मुकदम्मेबाजी, जातीय भोज, पंचायतों का पतन और सरकार की भूमि पर नीति आदि हैं।

ऋण एक इस प्रकार का रोग है कि व्यक्ति एक बार इसमें फँस जाए तो इसमें से जल्दी निकलता नहीं। महाजन के अर्थजाल से मुक्त होना तो दुष्कर ही है। प्रतिष्ठाप्रिय परिवार के लिए इसके मायाजाल से बचना नामुमकिन है। हिंदी साहित्य में इस समस्या के विभिन्न पक्षों का चित्रण पाया जाता है। प्रेमचंद ने इस समस्या का चित्रण करके इसकी गंभीरता लोगों के सामने रखी है। गाँवों में ऋणग्रस्तता किसानों तक ही सीमित नहीं है। जमींदारी खत्म होने के बाद संपन्न परिवार भी ऋण से कैसे दब गए इसका चित्रण राही जी ने 'आधा गाँव' में किया है।

भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद गंगोली के एक साधारण जमींदार हकीमसाहब अपनी दयनीय दशा का वर्णन करते हुए अपने मित्र से कहते हैं- "एक ठो बेटा रहा.... ओ पाकिस्तान चला गया। एक ठो जमींदारी रही, ओहू को समझो कि पाकिस्तान चली गई। अरे, जोन चीज हमरे पास न हैं, ओ पाकिस्तान न गई ? हमरे पास रह का गवा है ? एक ठो बेवा बेटी, तीन ठो भतीज नवासे-नवासी, एक ठो बहू ओहि बेवया ही हैं, तीन ठो पोता-पोती ओहू को यती में समझो। कल एक ठो खजाना और मिल गया। सुखरमवा नालिश कर दिहन हैं। अब हम ओका कर्जा कहाँ से दें ? हमारी समझ में तो कुछ आता न। नौ पराणी का पेट कैसे चलाए।"[1]

5.4 भिक्षावृत्ति की समस्या -

भिक्षावृत्ति केवल भिखारी के लिए अभिशाप न होकर समस्त सामाजिक बुराइयों की जड़ भी है। भारत में लाखों लोग अपना जीविकोपार्जन भिख माँगकर ही करते हैं। भिक्षावृत्ति

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 338

के अनेक कारण हैं। भारत में भिक्षावृत्ति का सबसे प्रमुख कारण किसानों का खेती-बाड़ी से वंचित किया जाना है। भारतीय लोग अधिक धार्मिक प्रवृत्ति के हैं, यह प्रवृत्ति ही भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहन देती है।

परिवार के टूट जाने से या पारिवारिक झगड़ों की वजह से बच्चों को घर से भाग जाने और बाद में जीविकोपार्जन का अन्य साधन न होने की वजह से भी भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। आधुनिक हिंदी उपन्यास साहित्य में अनेक प्रकार के भिखारियों की दशा का खूब चित्रण हुआ है। धार्मिक साधुओं एवं बनावटी धार्मिक साधुओं के वर्ग की धर्म भी सत्ता की प्रवृत्ति के कारण ही प्रोत्साहन मिलता है। आधुनिक हिंदी उपन्यास साहित्य में अनेक प्रकार के भिखारियों की दशा का खूब चित्रण मिलता है। धार्मिक साधुओं एवं बनावटी धार्मिक साधुओं के वर्ग की धर्मभीस्ता की प्रवृत्ति के कारण ही प्रोत्साहन मिलता है।

प्रेमचंद रंगभूमि में लिखते हैं कि "धर्म भीरूता में जहाँ अनेक गुण हैं, वहाँ एक अवगुण भी है, वह सरल होती है, पाखंड़ियों का दाँव उन पर सहज ही में चल जाता है, धर्मभीरू प्राणी तार्किक नहीं होता, उसकी विवेचना शक्ति शिथिल हो जाती है।"[1]

राही मासूम रजा ने 'सीन-75' में भीख माँगने की आड़ में संगठित रूप से लोगों को दिए जानेवाले धोखे का विस्तार से चित्रण किया है। वी. डी. अपनी इस प्रकार की योजना का विवरण देते हुए अपने मित्र अली अमजद से कहता है.... "मैं भिखमंगों की एक वर्कशाप चला रहा हूँ। भीख माँगने की तरफ अभी तक पढ़े लिखे लोगों का ध्यान नहीं गया है। अब तक यह रैकेट गुंड़ों के हाथ में था और तुम जानो, गुंड़ों में कोई ऐस्थेटिक सेंस तो होता नहीं। किसी की आँखें फोड़कर उसे अंधा फकीर बना दिया। किसी की टाँगे तोड़ दी.... वगैरह-वगैरह। एक दिन लेटे-लेटे ब्रेव वेव आ गई कि भीख माँगने के काम को शोफेस्टिकिक तरीके से आर्गनाइज किया जाए तो बहुत माल मिलेगा।"[2]

राही जी भारतवासियों की भीख देने की प्रवृत्ति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि "हिंदुस्थान के लोगों को भीख देने और भीख माँगने का बड़ा शौक है। जो भीख दे नहीं सकता वह

---

1. प्रेमचंद - रंगभूमि, पृ. 70
2. राही मासूम रजा - सीन- 75, पृ. 104

किसी-न-किसी स्टाइल में भीख माँगने लगता है। यानी पूरी सामाजिक जिंदगी भीख के धागे में पिरोयी हुई है। इसलिए यदि भीख का राजनीतिक प्रयोग किया जाए तो हिंदुस्थानी गणराज्य 'बेगर्ज यूनियन' के कब्जे में आ सकता है।''[1]

वी. डी. भीख माँगने को एक कमर्शियल आर्ट बनाना चाहता था। इसीलिए वह कुछ संवाद लेखकों, कुछ मेकअप करनेवालों और एक आफ डाइरेक्टर रखना चाहता था जो फकिरों को ठीक तरह से भीख माँगना सिखा सके। इसलिए उसने फकिरों की एक वर्कशाप बनवाई। पहले तो फकिरों ने 'बेगर्ज वर्कशाप' का कोई नोटिस नहीं लिया। परंतु जब 'वर्कशाप' के फकिरों से कांपिटिशन हुआ तो फकिरों ने देख लिया कि 'वर्कशाप'वालों के सामने वे टिक नहीं सकते। धीरे-धीरे वर्कशाप की मेंबरी बढ़ने लगी। बाद में एक फकीर सेना की स्थापना हुई और हाजी साहब उसके नेता बने। उन्होंने एक प्रेस कॉफ्रेंस में कहा- ''समाज और सरकार को चाहे यह अच्छा लगे या बुरा, पर अपने देश में करोड़ सवा करोड़ लोग मुसतकिल तौर से और तीन साढ़े तीन करोड़ लोग टेम्परेरी तरीके से भीख माँगने का काम करते हैं। यानी फकीर ही मुसलमानों के बाद हिंदुस्थान की जब से बड़ी माइनारिटी है और मुसलमानों और हरिजनों की तरह उन्हें भी यहाँ जीने और अपना कारोबार चलाने का पूरा अधिकार है।''[2]

किस प्रकार भिक्षुओं के संगठित दल समय-समय पर देश में होनेवाली अकस्मात दुर्घटनाओं आदि का अनुचित लाभ उठाकर लोगों में उन्हें लूटते हैं इसका अत्यंत व्यंग्यात्मक ढंग से राही जी ने चित्रण किया है।

राही मासूम रजा ने अपने उपन्यास 'कटरा बी आर्जू' में इतवारी बाबा के माध्यम से इस समस्या का चित्रण किया है। उन्होंने इसमें बहुत से फकीर वास्तव में ही बहुत धनवान होते हैं यह दिखलया है। इतवारी बाबा का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं- ''इतवारी बाबा तब इतने बुढ़े नहीं थे। चालीस पैंतालीस के फेरे में रहे होंगे। पर उन दिनों भी भीख ही माँगा करते थे। हप्ते में छः दिन भीख माँगने के बाद सातवें दिन आराम किया करते थे और शायद यही कारण है कि लोग उन्हें इतवारी बाबा कहने लगे। कटरा मीर बुलाकी में इतवारी बाबा का असली नाम किसी को याद

---

1. राही मासूम रजा, सीन- 75, पृ. 106
2. वही, पृ. 106

नहीं था। शायद खुद इतवारी बाबा भी अपना नाम भूल चुके थे। सन् सैतालीस के बाद वे बाकायदा इनकम टैक्स भी भरते थे।''[1]

देश राज ने इतवारी बाबा को सोमवार के दिन भोलानाथ की दुकान पर देखकर पूछा- '' 'ई का भाई। इतवारी बाबा आज पीर को कैसे दिखाई दे रहे ?'

'हम आज से, का कहते हैं, चौदह दिन की उवाली छुट्टी को, जो सरकारी लोग लेते हैं, ओही छुट्टी पर हैं,' इतवारी बाबा ने कहा। उन्नति के वास्ते कोई का किहिस है आज तक ? और भैया कोई बात भी नहीं कि हमरा ओट टाटा बिरला और लाल मुहम्मद बीड़ीवाले से कुछ कम है वजन में।''[2]

राही जी ने इस उपन्यास में स्पष्ट किया है कि भिक्षुक मूल में दरिद्र नहीं होते। इतवारी बाबा मरते समय अपना वसीयतनामा लिखवाते हैं। इसीका उल्लेख करते हुए वे देश से कहते हैं कि, ''आज हम उ जो रानी मंडलीवाले अकीफ अहमद ऐडाकेट है न उसके पास जाके अपना वसीयतनामा लिखवाया....' बंक में बारह हजार तीन सौ सत्ताइस रुपया चौबीस पैयसा नकद है। तो हम लिखवा दिया है कि हमरे मरे के बाद हमरा क्रियाकर्म तो चंदे से किया जाए के हमारे कि अपनी कमाई का कफन पहिने में शरम आएगी ऊ जो बारह हजार तीन सौ है ओमे से हजार रुपया फकीरों को बाँटे के वास्ते है। बाकी रुपया हम तोरी श्रीमती गाँधी के नाम कर दिया है कि इंजीनियर और डाक्टर बहुत बढ़ गए बाकी हम कहित है कि देश में भीख माँगेवालन की आबादी बहुत बढ़ी है।

राही जी ने भिक्षावृत्ति की समस्या की गंभीरता अनेक उदाहरण देकर स्पष्ट की है। भारतीय समाज में फैले हुए पाखंड़ियों एवं भीख की आड़ में किए जानेवाले व्यवसाय की ओर भी राही जी ने पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है।

5.5 मूल्य-वृद्धि की समस्या -

देश की आंतरिक समस्याओं में सबसे भयंकर समस्या मूल्य-वृद्धि की समस्या है। सदियों से जीवन की आवश्यक चीजों का मूल्य बढ़ता चला जा रहा है। इसके कारण लोगों के

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 14
2. वही, पृ. 10

लिए जीवन निर्वाह कठिन से कठिन होता जा रहा है। रुपए का तो कोई मूल्य ही नहीं रहा है। जो रुपया कभी अपने स्वामी को गर्व और आत्मा विश्वास से भरना था और जो भी चीज चाहे खरीद सकता था, वह आज बेकार सिद्ध हो रहा है।

स्वाधीनता के दिनों में यह आशा लोगों ने की थी कि आझादी से देश में सुख समृद्धि का प्राधान्य होगा। परंतु यह आशा फलवती नहीं हो सकी। यद्यपि सरकारी योजनाओं में वृद्धि होती रही, कागजी आकड़ों के अनुसार हमारी उत्पादन क्षमता बढ़ती गई परंतु जनजीवन में सुख और आनंद का अभाव भी बढ़ता गया। आज की स्थिति तो यह है कि इस महँगाई की समस्या के कारण जनता का असंतोष चरम सीमा तक पहुँच गया है।

पंचवर्षीय योजनाओं की वजह से उत्पादन के क्षेत्र में हम अवश्य आगे बढ़े हैं। बहुत-सी आवश्यक चीजें हम पहले बाहर से मँगवाते थे आज यहाँ तैयार होने लगी हैं। इन सब बातों का जनजीवन पर अवश्य प्रभाव पड़ा है। विशेषकर ग्रामीण जनजीवन पर ज्यादा प्रभाव पड़ा है और उनका स्तर भी ऊँचा उठा है। आज ग्रामीण जनता ऐसी वस्तुओं का उपयोग करने लगी है, जो पहले वह उसका नाम तक जानती नहीं थी। इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत-सी ऐसी वस्तुएँ जो अब तक सीमित वर्ग के लिए समझी जाती थी, आज वह जन समुदाय के उपयोग में आने लगी हैं। परिणामस्वरूप उनके मूल्य में वृद्धि अनिवार्य हो गई है।

जिस अनियत्रित गति से मूल्य की वृद्धि हुई है उससे यह स्पष्ट होता है कि उसमें स्वार्थी लोगों का ही हाथ है। इन लोगों में जमाखोरों और चोर बाजारवालों की ही प्रमुखता है। आज की स्थिती यह है कि खाद्यान्न से लेकर जीवन की अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाली जितनी भी वस्तुएँ हैं, उन सबका देश में बाहुलय है, लेकिन बाजार में उसके दर्शन नहीं होते। वे अब चीजें चोर बाजारों में संग्रहित होती हैं, जहाँ उचित से कई गुना अधिक मूल्य देकर उन्हें खरीदना पड़ता है।

भारत में मूल्य वृद्धि की समस्या से जनता और सरकार दोनों चिंतित हैं। उसके मूल कारणों का पता दोनों को है, लेकिन उसके निराकरण में दोनों भी असमर्थ हैं। इसकारण इस समस्या की गंभीरता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। इन सबकी उत्तरदायी वर्तमान प्रजातंत्रात्मक

प्रणाली है। इसके साथ-साथ देश में मूल्य वृद्धि की समस्या का प्रमुख कारण वितरण व्यवस्था का दोषपूर्ण और भ्रष्ट होना है। इसी ने ही चोर बाजारी को जन्म दिया है।

राही मासूम रजा के सभी उपन्यास मध्यम वर्ग की समस्याओं पर आधारित हैं। उन्होंने सभी उपन्यासों में मध्यम वर्ग पर मूल्य वृद्धि के कुपरिणामों को विस्तार से विशद किया है।

'कटरा बी आर्जू' में जब देशराज और बिल्लो अपनी घर बनाने की योजना का उल्लेख इतवारी बाबा से करते हैं तब वे उत्तर देते हैं कि "अरे घर का चक्कर छोड़ो तू लोग। जब शाहजहाँ ताजमहल बनवाइन रहा तब ससती का जमाना रहा। अब तो क्रिया कर्म में पहले के सादी विवाह से दूना तिनगुना खरच हो जाता है।"[1]

इतवारी बाबा भीख माँगकर अपना जीवन बिताते हैं। परंतु वे जानते हैं कि महँगाई की समस्या के कारण आज मध्यवर्गीय परिवारों की दशा इतनी दयनीय हो गई है कि उन परिवारों के सदस्यों से भीख माँगते हुए स्वयं उन्हें लज्जा होती है। इसी को स्पष्ट करते हुए वे बिल्लो स कहते हैं- "अरे बेटा, हमारे लड़कपन में पाँच रुपए में चार परानी का पूरा घर चल जाता रहा इज्जत से और मजे में। आज जब जितनी जियादा होती जा रही, पैयसा कम होता जा रहा। पहले लोग हमरी तरह आके भीक देते रहे। अब हमें देख के सड़क की पटरी बदल लेते हैं। बहुत से लोगन से तो भीग माँगना छोड़ दिया है, केह मारे किहम्मे उनके घर का हाल मालूम है।"[2]

मध्यम वर्ग में विशेषकर वेतन पानेवाले लोगों की दशा अत्यंत दयनीय होती है। जो वेतन उन्हें महीने की प्रथम तिथि को मिलता है, वह उसी दिन पिछले महीने में लिए हुए उधारों की चुकाने में ही समाप्त हो जाता है। फिर उनके पास फिर से उधार लेने के सिवा और कोई साधन ही नहीं बचता। इसी दयनीय स्थिति का वर्णन करते हुए शम्सू मियाँ देश से कहते हैं कि तुमसे का पर्दा बेटा। आमदनी ओही दु सौ अठ्ठाइस और बाजार का हाल है कि हरा धनियाँ जाफरान के भाव। पहिले के जमाने में महीने की तीस और पहली में फरक होता रहा। अब जैयसी तीस, वैसिये पहली। कलंडर तो खाली दीवार सजाए के काम आता है।"[3]

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 20
2. वही, पृ. 32
3. वही, पृ. 44

महँगाई का मध्यवर्गीय परिवारों के जीवन पर इतना कुप्रभाव पड़ा है कि त्यौहारों एवं विवाह आदि के अवसर पर खर्च करने के लिए लोगों के पास कुछ भी पैसे नहीं होते। राही जे इस दशा का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि "देशराज के विवाह के समय लौंड़ा नाचते हुए गा रहा था -

रसगुल्ला घुमाय के मार दियो रे।
पहिला रसगुल्ला मैंने ससुरजी को मारा।
पहिला रसगुल्ला मैंने ससुरजी को मारा।
उनको बूढ़ा समझ के छोड़ दियो रे।
रसगुल्ला घुमाय के मार दियो रे।

आशाराम उदास हो गया। घुमा के मारे के लिए रसगुल्ला है कहाँ महनाज ? रसगुल्ला है कहाँ ? शक्कर सात रुपए किलो। माश की दाल चार रुपए किलो दूध : तीन रुपए किलो। ससुरजी को मारने के लिए रसगुल्लों का बंदोबस्त हो नहीं सकता तो उसका जी उचाट हो गया।"[1]

इस प्रकार राही जी स्पष्ट करते हैं कि मध्यम वर्ग के लिए मूल्य वृद्धि ऐसी भयंकर समस्या है जिसका प्रभाव जीवन के सभी पक्षों पर पड़ता है।

5.6 वर्ग-संघर्ष की समस्या -

हिंदी गद्य साहित्य में उपन्यास सम्राट प्रेमचंद ने पहली बार भारतीय अध्यात्मिक परंपरा से परे हटकर समाज में अर्थ की महत्ता को शीर्ष महत्त्व प्रदान किया है। उन्होंने 'शांति' कहानी में स्पष्ट कह दिया है कि संतोष दरद्रिता का दूसरा नाम है। संतोष का पाठ शोषक को और अधिक शोषक एवं शोषित को और अधिक शोषित बनाता है। परिणामतः अव्यवस्था एवं क्रांति अनिवार्य है। प्रेमचंद स्वयं शोषित थे और दूसरे उन्होंने शोषण को भीतरी आँखों से देखा था, इसलिए उनकी कलम से शोषित वर्ग को समर्थन और नेतृत्व मिला।

राही मासूम रजा ने पूँजीपति वर्ग एवं मजदूर वर्ग के बीच संघर्ष एवं हड़ताल के माध्यम से मजदूरों की अपनी माँगों को मनवाने की प्रवृत्ति का वास्तविक वर्णन अपनी रचना 'कटरा

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी अर्जु, पृ. 89

बी आर्जु' में किया है। राही जी स्पष्ट कर देते हैं कि पूँजीपति वर्ग की यह प्रवृत्ति है कि वे मजदूरों का अधिकतम शोषण करते हैं। अतः अपनी माँगों को मनवाने के लिए उन्हें हड़तालें करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं होता।

हड़ताल के समय किए गए एक भाषण में आशाराम कहता है कि पूँजीपति उद्योगपति मजदूरों की समस्याओं को अच्छी तरह समझ ही नहीं सकते, क्योंकि "समझेये कैयसे कि फाका होता का है। और हम लोग को फाका समझाए की जरूरत क्या है ? हम लोग को तो बाप दादा के जमाने से परट्टिस है फाका करे की। बाकी हम लोग आज ई ते कर रहे हैं कि आज ये फाका नहीं करेंगे। ....और जो फाका करना ही है तो बाबू गौरीशंकर लाल पांडेय ही करेंगे। ई तो कोई बात ना भई साब, कि हम तो भुक्खे मरें और बाबूसाहब हमरे पसीने मों बोर-बोर के पूरी खायें....।"[1]

मजदूर जब हड़ताल करते हैं, तब उनका मन कैसी स्थिति में होता है इसका वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं कि "शम्सू मियाँ तो अपने डर के बावजूद बोनस का बजट भी बना चुके थे। उनके चश्मे का नंबर बदल गया है। वह सोच रहे थे कि अभी बोनस मिल जाए तो घर जाते-जाते किसी चश्मेवाले की दुकान पर पल भर रूक कर वह एक नया चश्मा खरीद लेंगे। देशराज सोच रहा था कि हाऊफंड में चार सौ अस्सी की कमी रह गई है। तड़ से जमीन लेकर घर का काम शुरू कर दूँगा। .....मुरली अपने लिए ट्रंजिस्टर खरीदने का प्रोग्राम बना रहा था। ....गरज की जितने आदमी थे उतनी आर्जूएँ थी।"[2]

लेकिन पूँजीपतियों को हड़ताल को तोड़ने का उपाय अच्छी तरह मालूम था। वे हड़ताल करनेवाले नेताओं में से कुछ को अपनी ओर करके उनमें कूट उत्पन्न कर देते हैं और हड़ताल को असफल कर देते हैं।

पूँजीवादी और मजदूरों के बीच के संघर्ष की समस्या आधुनिक युग की गंभीर समस्या है, क्योंकि आधुनिक युग में मध्यवर्गीय मजदूरों की संख्या अधिक है तथा पूँजीपति उद्योगपति निरंतर उनका शोषण करने से रूकते नहीं। राही जी ने इन मजदूरों की स्थिति का तथ्यात्मक चित्रण प्रस्तुत करते हुए उनके प्रति सहानुभूति प्रकट की है।

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 18
2. वही, पृ. 21

निष्कर्ष -

राही जी ने 'आधा गाँव' उपन्यास में गंगौली में फैली हुई बेरोजगारी, भयंकर दरिद्रता तथा उसके परिणामस्वरूप सर्वव्याप्त ऋणग्रस्तता का चित्रण किया है। राही जी ने बेरोजगारी समस्या का चित्रण करके यह स्पष्ट किया है कि इस समस्या का समाधान तब तक संभव नहीं है, जब तक भारतवासी उसके निवारण के लिए सरकार से आशा करना छोड़कर अथक परिश्रम करके उन्नति के मार्ग पर अग्रसर नहीं हो जाते। सरकारी कर्मचारियों, विशेषकर पुलिस विभाग द्वारा ली जानेवाली रिश्वत की प्रवृत्ति को प्रस्तुत उपन्यासों में अनेक बार प्रस्तुत किया है। हमारा समाज किस सीमा तक ह्रासोन्मुख हुआ है। राही जी इस समस्या का समाधान इसी में मानते हैं कि लोगों में इतनी जागृति आ जाए कि वे इन कर्मचारियों के फंदे में न फँसे।

दरिद्रता की समस्या के विशिष्ट सामाजिक वर्गों, जैसे-सरकारी कर्मचारियों, साहित्यकारों आदि पर प्रभाव का वास्तविक चित्रण राही जी ने 'सीन-75', 'कटरा बी आर्जू' और 'आधा गाँव' में किया है। इस समस्या का समाधान राही जी इसी में मानते हैं कि मध्यवर्गीय लोग झूठी इज्जत के पीछे दौड़ते हुए अपने पारिवारिक जीवन को छिन्न-भिन्न न करे। साथ में तुरंत धनवान बनने के चक्कर में पड़कर, अनुचित साधनों, उपायों को अपनाकर स्वयं को सामाजिक बुराइयों का केंद्र न बना ले।

'सीन-75' और 'कटरा बी आर्जु' में राही जी ने भारत की गंभीर समस्या भिक्षावृत्ति का तथ्यात्मक चित्रण प्रस्तुत कर यह स्पष्ट किया है कि सभी भिखारी दया के पात्र नहीं हैं क्योंकि आज यह भी एक व्यवसाय हो गया है। राही जी ने यह दिखलाया है कि संसार के अन्य देशों की अपेक्षा यह प्रवृत्ति भारत में ही ज्यादा पनप रही है, इसका कारण भारतीयों का दयालु स्वभाव है। राही जी के अनुसार इस समस्या का समाधान जनता की जागृति में है।

मूल्य वृद्धि की समस्या का चित्रण करके राही जी ने यह बतलाया है कि आर्थिक उन्नति में ही भौतिक सुख सम्मिलित है। जब तक लोग अथक परिश्रम करके उन्नति के मार्ग पर आगे नहीं बढ़ेंगे तब तक उनको इस समस्या का सामना करना पड़ेगा। वर्ग संघर्ष की समस्या का चित्रण करके राही जी ने स्पष्ट किया है कि जब तक समाज में वर्गों के बीच असमानता बनी रहेगी, पूँजीपतियों और मजदूरों का अस्तित्व रहेगा तब तक वर्ग-संघर्ष की समस्या बनी रहेगी। इसका समाधान तब होगा, जब सामाजिक वर्गों के बीच से विषमता एवं अंतरों का निवारण होगा।